International Journal of Applied Research 2016; 2(8): 842-844

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(8): 842-844
www.allresearchjournal.com
Received: 28-06-2016
Accepted: 29-07-2016

ममता तिवारी
गवेशिका स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग, ल०ना०मि० विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत।

Correspondence
ममता तिवारी
गवेशिका स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग, ल०ना०मि० विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत।

पराशरस्मृति दण्डविधान प्रायश्चित

ममता तिवारी

सारांशः
पराशरस्मृतीय दण्ड विधान प्रायश्चित 12 अध्यायों में विभक्त है। पराशरस्मृति के प्रणेता भगवान वेदव्यास के पिता ऋषि पराशर है, जिन्होंने चारों वर्णों की धर्म व्यवस्था को समझकर सहज साध्य रूप धर्म की मर्यादा को निर्देशित किया है तथा कलयुग में दान धर्म को प्रमुख बताया है। प्रथम अध्याय के 30 श्लोकों में कहा गया है कि सतयुग में प्राण अस्थिगत, त्रेतायुग में मांसगत, द्वापरयुग में रूधिर में, तथा कलयुग में अन्न में बसते है। कुलयुग में आचार–विचार, परिपालन मुख्य धर्म है। तृतीय अध्याय में शिशुओं, गर्भवती में अशौच एवं यज्ञोपवित होने तक अशौच व्यवस्था वर्णित है। चौथे अध्याय में गर्भपात को ब्रह्म हत्या के तुल्य मानते हुए इससे दुना पाप का भागी होना बताया गया है। छवॉ अध्याय में किसी भी प्राणी के बध को पाप कहा गया है तथा इनके प्रायश्चित का विधान बताया गया है। नौवे अध्याय में स्त्री, बालक, सेवक, रोगी तथा दुःखियों पर कोप न करने का निर्देश दिया गया है। बारहमें अध्याय में किसी भी पापी के साथ शयन, संसर्ग एवं आशन पर बैठना तथा भोजन करना भी पाप कहा गया है। जिसमें प्रायश्चित के लिए गोव्रत पालन का निर्देश है।

प्रस्तावनाः
किसी भी समाज या राजसत्ता के संचालन के लिए कतिपय नियमों की परमावश्यकता होती है। उन नियमों एवं प्रावधानों का मानना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य हो जाता है किन्तु जब कोई मनुष्य जाने अनजाने नियमों के पालन में प्रमाद करता है और परिणामतः निन्दनीय कार्य करता है तो वैसी स्थिति में समाज या राजसत्ता के प्रावधान द्वारा ऐसे व्यक्ति को दण्ड देना प्रायश्चित कराना या दोनों को भागी बनाना आवश्यक हो जाता है। ऐसा करने से समाज निर्बन्ध गति से विकासोन्मुख हो जाता है, किन्तु स्थान और समय के साथ–साथ दण्ड एवं प्रायश्चित संबंधी नियमों में कठोरता एवं शिथिलता का आना स्वभाविक ही है। यहाँ यह प्रश्न उठता है कि क्या दण्ड प्रायश्चित से उस व्यक्ति के द्वारा किया गया पाप नष्ट हो जाता है? यदि हम गम्भीरतापूर्वक विचार करे तो यह स्पष्ट हो जाता है कि दण्ड या प्रायश्चित से पूर्वकृत पाप का नाश तो नहीं होता है किन्तु भविष्य में निन्दनीय कार्य या पाप करने से व्यक्ति विरक्त हो जाता है। धर्मशास्त्र के इतिहास भाग–3 डॉ० पाण्डु रंग काणे रचित पुस्तक में वर्णित है कि निन्दनीय कार्य या पाप करने से व्यक्ति तो विरत होते ही है साथ–साथ अन्य लोगों पर इसका प्रभाव पड़ता है, जिसके कारण लोग पाप कर्म से बचते है। दण्ड या प्रायश्चित का मूल उद्देश्य मनुष्य को समाज विरोधी होने से बचाना है। अनेक पाप कर्म ऐसे है, जिनके लिए प्रायश्चित और दण्ड दोनों की व्यवस्था है। प्राचीन, मध्य एवं आधुनिक काल में कुछ ऐसे कुकार्य रहे है जिनके लिए राजदण्ड के साथ–साथ प्रायश्चित करना भी आवश्यक रहा है।
हत्या, चोरी, व्यभिचार आदि कृत्यों के लिए राजदण्ड और प्रायश्चित दोनों करते रहना है। भारत के संदर्भ में हम कह सकते है कि प्राचीन एवं मध्यकालीन दण्ड व्यवस्था अन्य देशों की अपेक्षा हल्की थी। क्योंकि सामान्य अपराधों के लिए राज्यदण्ड देना आवश्यक नहीं था, केवल प्रायश्चित से ही पाप का शमन हो जाता था। इस संदर्भ में यह प्रश्न उपस्थित होता है कि प्रायश्चित का प्रावधान पहले किया गया या राजदण्ड का। क्या प्रायश्चित या राजदण्ड एक–साथ चलते थे या पृथक–पृथक ? सचमुच इन प्रश्नों का उत्तर निश्चित रूप से देना बड़ा कठिन कार्य प्रतीत होता है।
आरंभिक काल में भी न्याय संबंधी कार्यों एवं शासन–प्रबंध संबंधी कार्यो में अन्तर विशेष रूप से प्रकट कर दिया गया था। वृहस्पति का स्पष्ट कथन है कि यदि किसी सच्चरित्र एवं वेदभ्यासी व्यक्ति ने चोरी का अपराध किया है तो बहुत समय तक बन्दी गृह में रखना चाहिए और धन लौटाने के

उपरान्त उससे प्रायश्चित कराया जाना चाहिए। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्रायश्चित और राजदण्ड दोनों साथ–साथ चलते थे। धर्मशास्त्र इतिहास भाग–3 पृ० 1050

विद्वान को सभी प्रायश्चित के लिए स्वयं अपने नियम निर्धारित करना चाहिए था और राजदण्ड देना चाहिए था। यह बहुत संभव है कि विद्वत्परिषद के धार्मिक न्याय क्षेत्र में राजा हस्तक्षेप नहीं करता और ब्राह्मण लोग न्यायाधीशों के रूप में तथा दण्ड संबंधी सम्मतियाँ देकर राजा को न्याय शासन में सहायता देते थे।

शतपथ ब्राह्मण में आया कि–राजा बहुश्रुत है। राजा प्रायश्चितों के संपादन में सहायता भी करता था। राजा की अनुमति ले लेने के उपरान्त परिषद को उचित प्रायश्चित का निर्देश करना चाहिए, बिना राजा को बताये स्वयं निर्देश नहीं करना चाहिए किन्तु हल्का प्रायश्चित बिना राजा को सूचित किये हुए भी किया जा सकता है।

1. श० ब्रा० 5. 4. 4. 5

निबसाद धृतव्रत इति धृतिव्रतो वै राजा एवं च श्रोत्रियश्चैतौह द्वौ मनुष्येषु धृत व्रतो।

2. ध० शा० उ० भाग 3 पृ०–1051

पराशर का कथन है कि राजा को ब्राह्मण की आज्ञा से प्रायश्चित का निर्देश करना चाहिए स्वयं नहीं। थोड़ा सा प्रायश्चित स्वयं बता सकता है की जो राजा ब्राह्मणों का सौगुना लेकर राजा को ही भोगना पड़ता है, वह पाप स्पष्ट प्रतीत होता है। प्रायश्चितों के संपादन में राजा न केवल विद्वत्परिषद की सहायता करता था अपितु स्वयं प्रायश्चितों का निर्देश भी करता था। याज्ञवल्क्य का कथन है कि ब्रह्महत्या पापी बान्धवजन (चतुर्थी आदि रिक्ता तिथियों को उसके नाम से दिन के पंचम भाग में) पा०स्मृ० 8 : 36, 37

''राज्ञश्चाऽनुयते स्थित्वा प्रायश्चितं विर्निदेशेत्।
स्वयमेव न कर्त्तव्य कर्त्तव्या स्वलपनिष्कृतिः।।
''ब्राह्मणांस्तानतिक्रम्प राजा कु करर्त्तु यदीच्छति।
तत्पापं शतधा भूत्वा राजानमनुगच्छति।।

दासी के द्वारा उसके निर्मित जल का भरा घड़ा गाँव के बाहर रखवा दें और सभी कार्यों में उसका बहिष्कार करें। या० स्मृति 3: 294

''दासीकृम्यं बहिर्ग्रामान्निनये रूसवा बान्धताः।
पतितस्य बद्धिः कुर्युः सर्वकार्येषु चैवतय्।।

परिषद् द्वारा व्यवस्थित प्रायश्चित न करने पर पापियों को दण्ड देने का अधिकार राजा को प्राप्त था, किन्तु वह सभी विषयों में ऐसा करता था या नहीं, इस विषय में कुछ कहना कठिन है। राजदण्ड और प्रायश्चित के अतिरिक्त जातिदण्ड की भी व्यवस्था थी। प्रायश्चित कर लेने के उपरान्त लोगों से सम्पर्क स्थापित करने के लिए भोज देना पड़ता था और मिठाईयाँ बाँटनी पड़ती थी। इस प्रकार अपराधी को तीन भार वहन करने पड़ते थे– राजदण्ड द्वारा, दण्ड परिषद द्वारा व्यवस्थित प्रायश्चित एवं विद्वान ब्राह्मणों को भोज स्वजातियों को मिठाई। शिथिलता भी दिखाई पड़ती है। जब हम याज्ञवल्क्य एवं पाराशर स्मृति में उल्लेखित दण्ड एवं प्रायश्चित की व्यवस्था के संदर्भ में विचार करते है तो ऐसा प्रतीत होता है कि दोनों स्मृतियों की दण्ड व्यवस्था में पर्याप्त अन्तर है। याज्ञवल्क्य स्मृति में दण्ड एवं प्रायश्चित दोनों की कठोर व्यवस्था अपराधियों के लिए उल्लेखित है किन्तु पराशर स्मृति में राजदण्ड की भी व्यवस्था पर्याप्त या हो सकता है कि भयंकर अपराध के लिए राजदण्ड की व्यवस्था रही होगी जिसका उल्लेख करना पराशर के लिए अभीष्ट न हो रहा होगा। यह भी संभव है कि पाराशर कालीन समाज प्रायश्चित मात्र से ही व्यवस्थित रहा होगा।

पाराशर स्मृति का मुख्य कार्य–विषय शुद्धिकरण एवं प्रायश्चित का निष्पादन है जो व्यक्त करता है कि तात्कालिक समाज को दण्ड स्वीकार नहीं था। इस स्मृति में केवल विभिन्न प्रायश्चितो का विवरण मिलता है, जिसका सविस्तार विवेचन यहाँ प्रस्तुत करना अपेक्षित जान पड़ता है।

पाराशर स्मृति में वर्णित प्रायश्चितों को निम्नांकित उपवर्गो में विभाजित कर अध्ययन करना उपर्युक्त जान पड़ता है।

1. गौ की हत्या करने वाले का प्रायश्चित।
2. सौतेली माता इत्यादि गमन संबंधित प्रायश्चित।
3. श्वपाकी या चाण्डाली के साथ सहवास करने का प्रायश्चित।
4. ब्राह्मणों द्वारा पापकर्म किये जाने पर विहित प्रायश्चित।

सौतेली माता इत्यादि संबंधियों में गमन करने वाले प्रायश्चित

धर्मवक्ता पाराशर ने व्यवस्था दी है यदि कोई व्यक्ति अपनी सौतेली माता, माता की सहेली, भतीजी, गुरू, पत्नी, भाई की पत्नी, भाभी या अपने गोत्र की किसी भी कन्या से गमन करता है तो उसे प्रायश्चित दक्षिणा स्वरूप तीन प्रजापत्य व्रत करना चाहिए एवं दो गाय दक्षिणा में देनी चाहिए तब वह शुद्ध हो सकता है। इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति मोहवश अपनी माता, बहन या पुत्री के साथ सहवास करे तो उसे तीन कृच्छ नामक उपवास करना चाहिए या तीन चन्द्रायण व्रत करने के बाद शिश्वनछेदन करने पर शुद्धि हो जाती है।[1] पारा० स्मृ 10: 13, 14, 15

''दरागोमिथुनं दद्याच्छुद्धि पाराशरोऽब्रवीत्।
दपतृदारान्समारूह्य मातराप्तां च भातृजामं।।''
''गुरू पत्नी स्न्नुषां चैव भ्रातृ भार्या तयैव च।
मतुलानीं सगोत्रां च प्राजापत्यत्रय चरेत।।''
''गोद्वय दक्षिणां दत्वा शुध्यते नात्र लंशपः।
पशु–वैश्यादिगमने महिष्युष्टी–कपीस्तायाा।।''

पाराशर का मानना है कि कोई व्यक्ति माता या बहन के साथ रमण करता है तो उसका प्रायश्चित अपनी लिंगेन्द्रिय काटने पर संभव है लेकिन यदि कोई अज्ञानतावश अपनी मौसी से गमन करे तो उसे प्रायश्चित के लिए दो चान्द्रायण व्रत एवं दस गायो और दस बैल दान देना चाहिए।[2]

पारा० स्मृ० 10: 10, 11

''प्राजापत्यं चरेत्कृच्छं चतुर्गोमिथुन दर्स्त।
मतर यदि गच्छेततु भगिनी स्वसती तथा।।''
''एतास्तु मोहितो गाखा त्रीजिकृच्छाणि संचरत्।।
''मातृष्वसृमे चैव आलमेद निकर्तनम्।
अज्ञानने तुयो गच्छेच्कुर्याच्चान्द्रायण त्रयम्।।''
''दरागोमिथुनं दधाच्छुद्दि पराशरोऽबतीत।
थ्पतृदारा समारूहा मातृराप्तां च भ्रातृजाम।।''

निष्कर्षः

पराशरस्मृति में विर्णत दण्ड विधान प्रायश्चित संबंधी प्रावधानों का उल्लेख किया गया है। कतिपय पाप कार्य ऐसे है जिनके लिए प्रायश्चित एवं दण्ड दोनों की व्यवस्था है। अतः अपराध एवं उससे संबंधित दण्ड पाप तथा उसके लिए निर्धारित प्रायश्चित आदि का विश्लेषण उचित प्रतीत होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः

1. अपराध और दण्डशास्त्र–लेखक–कौशल किशोर राय, चौखम्बा विधा भवन, वाराणसी–1965
2. धर्मशास्त्र का इतिहास भाग–1 लेखक पी०बी० कार्ण, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ।

3. धर्मशास्त्र का इतिहास भाग–2 लेखक–पी०बी० कर्ण, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ।
4. धर्मशास्त्र का इतिहास भाग–3, 4, 5 लेखक पी०बी०कर्ण, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ।
5. पाराशर स्मृति–आलोचनात्मक अध्ययन, ले०पे० अवध बिहारी झा एसो० नं० 37043 / 1968
6. अनुशासन पर्व (महाभारत) गीता प्रेस, गोरखपुर।